पंचतत्त्व की विवेचना : जलतत्त्व

देवर्षि कलानाथ शास्त्री
(राष्ट्रपति सम्मानित), प्रधान सम्पादक ''भारती''संस्कृत मासिक
पीठाचार्य, भाषामीमांसा एवं शास्त्रशोध पीठ - विश्वगुरुदीप आश्रम शोध संस्थान, जयपुर
पूर्व अध्यक्ष - राजस्थान संस्कृत अकादमी
आधुनिक संस्कृत पीठ - जगद्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय
पूर्व निदेशक - संस्कृत शिक्षा एवं भाषा विभाग, राजस्थान सरकार
सदस्य - संस्कृत आयोग, भारत सरकार

भारतीय संस्कृति की यह मान्यता सुविदित है कि मानव शरीर पांच तत्त्वों का बना हुआ है। पांच तत्त्व का पींजरा तामे पंछी पौन यह उक्ति प्रसिद्ध है। ये पांच तत्त्व हैं पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश। इन्हें पंचभूत भी कहते हैं। क्योंकि ये वे तत्त्व हैं जिनसे सारी सृष्टि बनी है। आधुनिक विज्ञान भी यह मानता है कि मानव शरीर में सर्वाधिक मात्रा यदि किसी तत्त्व की है तो वह है जल। हमारे शरीर में मांस, मेद, अस्थिरक्त, मज्जा आदि जो अनेक पदार्थ हैं उनमें जल का अंश कुल मिलाकर ७० प्रतिशत के लगभग बैठता है।

आयुर्वेद के अनुसार भी रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र ये सात धातुएं हैं जो शरीर को धारण करती हैं। इनमें अस्थि के अलावा शेष सब में जलीयांश बहुत है। पांच तत्त्व के पिंजरे में ही प्राण और आत्मा सुरक्षित रहते हैं। दूसरी ओर प्राण के कारण ही ये पांचों तत्त्व शरीर में संगठित रहते हैं। प्राण निकलते ही वे विघटित होने लगते हैं और शरीर के पाचों तत्त्व पंच तत्त्व में मिल जाते हैं इसी को कहते हैं पंचत्व को प्राप्त होना।

हमारे वाङ्मय में वेदकाल से लेकर आज तक जल का यह महत्व शास्त्रों और काव्यों, दोनों में प्रतिफलित मिलता है। शास्त्रों में प्रसिद्ध है। कि अव्याकृत ब्रह्म ने जब सृष्टि की रचना करनी चाही तो सबसे पहले उसने जल को उत्पन्न किया।

मनु महाराज कहते हैं कि ब्रह्मा ने जल में सृष्टि का बीजवपन किया अत एव ससर्जादौ तासु बीज मवासृजत्। जल को विधाता की प्रथम सृष्टि माना जाता है। महाकवि कालिदास भी अभिज्ञान शाकुंतल के मंगलाचरण में सबसे पहले

जल का ही स्मरण करते हैं। या सृष्टिः स्रष्टुराद्या। कालिदास के अनुसार अष्ट मूर्ति शिव की पहली मूर्ति जल स्वरूप है जो सृष्टि का भी प्रथम तत्त्व है। संस्कृत में वेदकाल में जल शब्द का प्रयोग कहीं नहीं मिलता है। वेद जल को आपः कहकर पुकारते हैं और हमेशा बहुवचन में ही उल्लेख करते हैं। वेदों में जो सृष्टि विज्ञान वर्णित है वह बतलाता है कि ब्रह्म चार पादों में से अव्यय ब्रह्म अचिंत्य और सूक्ष्म है। अक्षर ब्रह्म तत्त्व रूप है। उसका मूर्त स्वरूप क्षरब्रह्म कहा जाता है जिसकी पांच कलाएं ब्राह्मण ग्रंथों में बताई गई है। वे हैं प्राण, आपः वाक्, अन्न और अन्नाद।

प्राण वह तत्त्व है जो समस्त सृष्टि का आधार है और उसे गति देता है। आपः जलीय तत्त्व है और वाक् पदार्थ और दृश्य प्रपंच का वाचक है। हमारे प्राचीन वाङ्मय में जल को अग्नि की माता कहा गया है। इस दृष्टि से जल और अग्नि एक ही तत्त्व के दो स्वरूप है। इनमें भृगु कोमल तत्त्व है और अंगिरा अग्नि तत्त्व है। इसे पंडित लोग इस प्रकार भी बतलाते हैं कि आधुनिक विज्ञान में हाईड्रोजन के दो अंश और ऑक्सीजन का एक अंश जल में बताया जाता है वही भृगु और अंगिरा है। जयपुर के प्रसिद्ध वैदिक समीक्षक पं. मधुसूदन ओझा ने जो वेद विज्ञान विस्तार से बताया है उसमें आप तत्त्व का बड़ा विशद् वर्णन है। उन्होंने स्वयंभू लोक और परमेष्ठि लोक का जो विवेचन किया है उसमें परमेष्ठि लोक को आपोमय तत्त्व से बना बताया है।

सांख्य आदि भारतीय दर्शनों में सृष्टि की प्रक्रिया बतलाते हुए सत्त्व, रज और तम ये तीन गुण, प्रकृति मल और अहंकार का उद्भव, फिर पंचतत्त्वों तथा पंचभूतों का उद्भव बतलाते हुए स्पष्ट किया गया है कि किस प्रकार पंचतन्मात्रों से पंचभूतों के उद्भव की प्रक्रिया सृष्टि का कारण बनती है। पहले आकाश, फिर वायु, फिर अग्नि फिर जल और फिर पृथ्वी का उद्भव होता है। यह संचर क्रम है हम सामन्यतः प्रतिसंचर यानि उल्टे क्रम से पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश का नाम लेते हैं जो हमारी ओर से मूलस्रोत की ओर देखने की प्रक्रिया के कारण होता है। इसका अर्थ यह हुआ कि आकाश वायु और अग्नि के बाद जल का उद्भव हुआ। फिर इसे प्रथम सृष्टि क्यों मानी जाती है। इसका एक उत्तर तो यह है कि आकाश के साथ ही अप तत्त्व मूल रूप में पैदा हो जाता है किन्तु उसके भूतात्मक स्थूल रूप का उद्गम अग्नि से होने के कारण कहा जाता है अग्नेरापः अद्भ्यः पृथिवी वैदिक वाङ्मय में भूपिंड की रचना का क्रम अद्भुत ढंग से बताया गया है।

शतपथ ब्राह्मण स्थापना यह है कि जल से फेन, मृदा, सिकता, शर्करा, अश्मा, अयः और हिरण्य बनते हुए पृथ्वी का उद्गम होता है। इन आठ तत्त्वों से ही पृथ्वी बनी है। ये तत्त्व इसी क्रम से उद्भूत होते हैं। इन्हें ही आठ वसु भी कहा जा सकता है। जल की महिमा सृष्टि में जिस प्रकार उल्लेखनीय है उसी प्रकार मानव जीवन के लिए उसका महत्त्व भी

आदिकाल से स्वीकार किया गया है। संस्कृत में जल के जो नाम मिलते हैं उसमें उसे जीवन भी कहा गया है, भुवन भी और वन भी। जीवनं भुवनं वनम्। अमर कोष का यह कथन सिद्ध करता है कि जीवन में, ब्रह्माण्ड में और हमारे परिवेश में जल मूल तत्त्व के रूप में व्याप्त है।

इस प्रकार वैदिक वाङ्ग्मय में, उपनिषदों में और भारतीय दर्शन की शाखाओं में जल को सृष्टि के एक महत्त्वपूर्ण पदार्थ के रूप में सर्वत्र वर्णित और परिभाषित किया गया है। वैदिक वाङ्मय में सृष्टि विज्ञान का विवेचन करते हुए जल को सृष्टि के उद्गम अर्थात् विसृष्टि की प्रक्रिया के एक महत्वपूर्ण उपादान के रूप में बताया गया है। जबकि सृष्टि के बाद पंचभूतों में से एक भूत के रूप में उसका जो स्थान है उसका विवेचन सांख्य, न्याय, वैशेषिक आदि सभी दर्शनों में विस्तार से हुआ हैं जहां गोपथ ब्राह्मण ने उसका विसृष्टि के उपादान के रूप में वर्णन करते हुए उसे भृगु और अंगिरा के संघात के रूप में आदिम तत्त्व की तरह विवेचित किया है वहां दर्शनों ने उसे केवल द्रव्य या पदार्थ माना है।

गोपथ ने "आपो भृग्वं गिरो रूपमापो भृग्वंगिरोमयम्" लिखकर यह बताया है कि जल तत्त्व दो सूक्ष्म तत्त्वों का संघात है जिन्हें भृगु और अंगिरा कहा गया हैं। ये ऋषियों के नाम तो है ही, सूक्ष्म तत्त्वों के नाम भी हैं। एक दृष्टि से इन्हें अग्नि और सोम का रूप भी माना जा सकता है। भृगु सोम का प्रतीक है और अंगिरा अग्नि का। आधुनिक विज्ञान को प्राचीन वाङ्मय से समन्वित करने वाले कुछ मनीषियों ने इन्हीं दो तत्त्वों को हाइड्रोजन और आक्सीजन भी बतलाया है जैसा कि पहले बताया जा चुका है।

सांख्य आदि दर्शनों ने सृष्टि के उद्गम की प्रक्रिया यह बतलाई है कि अव्याकृत ब्रह्म से प्रकृति उद्भूत हुई फिर महत्तत्व, फिर अहंकार, फिर पंचतन्मात्र और फिर पंचभूत और इन्द्रिय पंचभूतों में जो जल है वह द्रव्य है। जबकि आदिसृष्टि के रूप में जिस जल का उल्लेख किया गया है वह सूक्ष्म तत्त्व है जिसमें सुनहरी अण्डा या कोस्मिक ऐग पैदा होता है। उस अण्डे को हिरण्य-गर्भ भी कहा गया है। चूंकि सारी सृष्टि उस अण्डे से पैदा हुई है अतः उसी पंचभूतों की उत्पत्ति भी समाविष्ट है। इससे पूर्व जो प्रथम अप तत्त्व था जिसमें ब्रह्मा ने बीज बोया वह सूक्ष्म तत्त्व के रूप में पहली सृष्टि कहा ही जा सकता है। यही रहस्य है जल को आद्य सृष्टि कहने का तथा समस्त जगत के जलमय होने का। यही बात दूसरी तरह भी बनाई जा चुकी है कि यह अप् तत्त्व तब भी था जब केवल आकाश था। चारों वेदों को क्रमशः अग्नि, वायु आदित्य और अप तत्त्व का प्रतीक मानने वाले विद्वान् ऋग्वेद को अग्नि का, यजुर्वेद को वायु का, सामवेद को आदित्य का और अथर्ववेद को अप् का रूप मानते हैं।

वैशेषिक दर्शन बड़ा पुराना दर्शन है जिसका दृष्टिकोण द्रव्यवादी है। यह जगत् में सात पदार्थ मानता है। द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष समवाय और अभाव। द्रव्यों का विवेचन करते हुए वह नौ द्रव्यों गिनाता है पृथवी, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिशा, आत्मा और मन। यहां जल का विवेचन करते हुए वह स्पष्ट करता है कि जल दो तरह के होते हैं नित्य और अनित्य। हम जिसे जल के रूप में इस्तेमाल करते हैं वह स्थूल द्रव्य अनित्य जल है जबकि नित्य जल अर्थात् अप् सूक्ष्म तत्त्व के रूप में विश्व में व्याप्त है। इस प्रकार इन्द्रियगम्य भूतों को जिन्हें पंचभूत कहा जाता है गिनाते हुए हमारे समस्त दर्शन जल को पंचभूत समुदाय के एक सदस्य के रूप में स्थान देते हैं। जल से ही पृथ्वी पैदा हुई है यह प्राचीन मान्यता इन दर्शनों को भी मान्य है।

संस्कृत साहित्य में तो जल का वर्णन भांति-भांति से किया गया है। वृष्टि का जल, नदी सरोवरों का जल, समुद्र का जल- सभी के रूप में जल ने कवियों की कावयित्री प्रतिभा को आकर्षित किया है। जलक्रीड़ा, श्रृंगार रस का प्रमुख अनुभाव रहा है। गंधर्व तो जलक्रीड़ा के विशेष शौकीन हुआ करते थे। जल को लेकर संकल्प करना या शपथ लेना बहुत प्राचीनकाल से सत्य क्रिया का प्रतीक रहा है। जल छोड़े बिना कोई दान सफल नहीं होता। शुद्धि के लिए जल अत्यन्त महत्वूपर्ण साधन है। वैसे अग्नि और वायु तक से शुद्धि का विधान है पर सर्वप्रमुख है जल। इसके सैंकड़ों पर्याय संस्कृत में मिलते हैं अंभः, सलिल, तोय, उदक वारि, नीर, पय आदि सुललित शब्द जल के विभिन्न रूपों का चित्रण करते हैं। जल की महिमा अनन्त है। वेदकाल से लेकर आधुनिककाल तक उसी की महिमा का यह विवेचन तो उस समुद्र की एक तरंग मात्र है।